मानव अधिकार: नई दिशाएं

अंक: 16, वर्ष: 2019

राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, भारत

Scanned with OKEN Scanner

मानव अधिकार : नई दिशाएं

अंक : 16 वर्ष : 2019

अनुक्रम

दो शब्द

न्यायमूर्ति श्री एच. एल. दत्तू
अध्यक्ष, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग

आमुख
डॉ. ज्ञानेश्वर मुले
सदस्य, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग

संपादकीय
श्री जयदीप गोविन्द, आई.ए.एस.
महासचिव, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग

खण्ड–I

आलेख

- मानव अधिकार से वंचित उपेक्षित समाज — 3–6
  राजेश कुमार यादव
- अन्योदय और मानव अधिकार — 7–10
  नामानंद गौतम साठे
- युद्ध व सशस्त्र संघर्ष क्षेत्रों में हाशिए पर स्त्री समाज–यौन हिंसा और मानव अधिकार — 11–20
  रामशरण तिवारी
- बाल–श्रम : एक सामाजिक अभिशाप — 21–40
  नीलमणि शर्मा
- हाशिए का समाज और मानव अधिकार — 41–50
  ज्ञानवती धाकड़

Scanned with OKEN Scanner

अन्योदय और मानव अधिकार

नामानंद गौतम साठे*

आज विश्व धरातल पर मानव अधिकारों की चर्चा ने आंदोलन का रूप लिया है। सृष्टि की रचना के समय से ही मानव-जाति अपने अस्तित्व को बनाए रखने और जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं, सुविधाओं और सुरक्षा के प्रति सजग रही है। विश्व के सभी राजनीतिक विचारक यह मानते हैं कि स्वतंत्रता मानव-जीवन का सबसे बडा वरदान है। आज विश्व के प्रायः सभी लोकतांत्रिक देशों में न केवल मानव अधिकार को मान्यता दी गई है अपितु उन्हें संरक्षित भी किया गया है। लेकिन दूसरी ओर मानव अधिकारों के उल्लंघन के मामले स्पष्ट हो रहे है। यह अत्यंत विचारणीय प्रश्न है इस संदर्भ में विकसित एवं विकासशील देश की दृष्टि का अंतर जो कि सामाजिक विवाद का विषय बना हुआ है तथा मानव अधिकार क्या है? इसका हनन क्यों? किस रूप में हो रहा है? आदि प्रश्नों पर विचार करना होगा।

भारत में हाशिए के लोग विषय पर विधिवत अध्ययन का अभाव ही है। समाजशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, पत्रकारिता आदि विषयों में सीमांत किसान, बंधुआ, दिहाडी, मजदूर, आदिवासी समाज, स्त्री समाज, दलित समाज आदि को लेकर स्वतंत्र लेखन हुआ है। इन सबका विचार हाशिए के लोग के रूप में किया जाना आवश्यक है। भारतीय समाज में उच्च वर्ग, समूहों और समुदायों के अलावा अनेक लोग समुदाय अथवा समूह ऐसे है जो आर्थिक, राजनीतिक आदि कारणों से अत्यंत कमजोर हैं। जीवन-यात्रा से बाहर फेंके गए हैं या फिर पिछड़ गए हैं। मुख्यधारा से बाहर होने के कारण अथवा बाहर कर दिए जाने के कारण हाशिए का जीवन जी रहे हैं। "हाशिए का अर्थ है कोर, किनारा, छोर, बगल, एक ओर होना, अलग करना या वस्त्र के चारों ओर का किनारा।" इससे स्पष्ट है कि जो मुख्य भाग अथवा मुख्य धारा से अलग कर दिया गया है वह हाशिया है। हाशिए के लोग वे लोग हैं, जो मुख्य धारा से अलग रहकर जीवन-यापन कर रहे हैं। जो उपेक्षित जीवन जीने के लिए विवश हैं।

मुख्याधारा की नीतियां और योजनाएं हाशिए के लोगों के हित की नहीं हैं। ये नीतियां व्यवस्था के अनुकूल होती हैं। इससे हाशिए के लोगों के मन में यह डर है कि ये नीतिया हमें नष्ट कर देंगी। प्रसिध्द आदिवासी विचारक श्री वाहरू सोनवने लिखते हैं, "आज कहा जाता है कि आदिवासियों को मुख्यधारा में आना चाहिए। मेरे सामने प्रश्न पैदा होता है, यह मुख्यधारा किसकी है? किसने बनाई है? कोई धारा तैयार करे और आदिवासी उसमें शामिल हो, यह ठीक नहीं। जिस धारा के निर्माण में हमारी भागीदारी नही होगी और उसमें हम भागीदार नहीं होंगे। इससे यह स्पष्ट होता है कि वर्तमान व्यवस्था हाशिए के लोगों के साथ न्याय नहीं कर पाती ओर वे लोग लगातार उपेक्षित जीवन जीने के लिए विवश हैं। स्टानक्वीस्ट ने लिखा है, दो संस्कृतियों के माहौल में समानांतर जीवन जीना उसकी विवशता बन जाती है। वह हाशिए पर चला जाता है। इससे उसके व्यक्तित्व में परिवर्तन आने लगता है।

आर्थिक विवशता उसके स्थान परिवर्तन का कारण होती है। लोग काम के लिए स्थान बदलते हैं और नई जगह पर अपने आपको व्यवस्थित करना चाहते हैं। पर वाहकर भी ऐसा

* विभाग प्रमुख, राजनीति विज्ञान, शिक्षण महर्षि ज्ञानदेव मोहेकर महाविद्यालय, कळंब, जिला उस्मानाबाद (महाराष्ट्र)

नही कर पाते और सीमांत आदमी बनकर रह जाते है। भारत में खेत में काम करने के लिए बाहर से लाए गए लोग, दिहाड़ी और बंधुआ, मजदूर, घरेलू नौकर और वेश्यावृत्ति के लोग आर्थिक कारणों से ही उस ओर जाते हैं।

हाशिए के लोगों के जीवन स्वरूप का बारीकी से अध्ययन किया तब यह ध्यान में आया कि उनके जीवन संघर्ष के तीन चरण होते हैं। प्रथम चरण में व्यक्ति को इस बात का ध्यान ही नहीं होता कि वह दोहरी जिंदगी जी रहा है। इस समय वह दोनों संस्कृतियों से परिचित होता है। वह दोनो संस्कृतियों को पहचानते हुए जीने का प्रयत्न करता है। वह समस्याओं से अनजान होता है। यह उसकी पहचान का प्रथम चरण होता है। दूसरी अवस्था तब आती है जब वह दो सस्कृतियों के बीच झूलता है। एक द्वंद्व निर्माण होता है। उसके भीतर एक सकट निर्माण होता है। इसी कारण वह किसी एक बात का निर्णय नहीं ले सकता। वह हाशिए का आदमी बन जाता है। इसी अवस्था में व्यक्ति में कुछ विशेष लक्षण निर्माण होते है। अकेलापन, बेचैनी, खीज आदि गुण दिखाई देते हैं। इसके बाद व्यक्ति अपने लिए एक निर्णय लेता है। अपने जीवन की दिशा निश्चित करता है। यह उसकी तीसरी अवस्था है। अस्थायीपन, बेचैनी, तनाव, क्लेष, व्यग्रता, अशांति कम होने लगती है। यह सब उसके अपने अचेतन मन की क्रियाएं होती हैं। इस प्रकार के लक्षण भारतीय समाज में दलित, आदिवासी, स्त्री, मजदूर, वेश्या, विधवा, बेसहारा लोग आदि समुदायों में पाए जाते हैं।

भारतीय समाज में हाशिए का जीवन जीनेवाले लोगों में स्त्रियों का स्थान सर्वोच्च है। स्त्रियां सामाजिक, जीवन में मुख्यधारा के अंदर की होती हैं। ऐसा होने पर भी उनकी स्वतंत्र पहचान नहीं होती है। वे किसी की बेटी, किसी की पत्नी अथवा किसी की माँ या बहन होती हैं। वे स्वयं स्वतंत्र रूप से कुछ नहीं होती। समाज में स्त्री की कोई अपनी पहचान नहीं होती। या तो अपने पिता के नाम से पहचानी जाती हैं अथवा विवाह के बाद में उसकी पहचान अपने पति अथवा पुत्र से जुड जाती है। इसलिए आज स्त्रियों की स्थिति भारत में बहुत कमज़ोर है। वैदिक काल में स्त्रियों का स्थान महत्त्वपूर्ण था लेकिन वर्ण–व्यवस्था के बाद उनका स्थान कमजोर होता गया। संपत्ति के मामले में उन्हें कोई अधिकार नहीं था। आगे चलकर उन्हें मौलिक अधिकारों से भी वंचित किया गया। लेकिन मानव अधिकार आयोग की स्थापना होने के बाद उनकी परिस्थितियों में सुधार आया है।

हमारे समाज में पारिवारिक संरचना में घरेलू नौकरों की स्थिति विचित्र है। वे हर क्षण परिवार के साथ रहकर भी हाशिए पर होते हैं। उनका संपूर्ण जीवन परिवार की सेवा में गुजर जाता है। फिर भी वे उस परिवार के नहीं हो पाते। अगर उन पर कोई संकट आता है तो परिवार उनकी कोई सहायता नहीं करता और अलग खड़ा हो जाता है। वे नौकर विपरीत परिस्थिति में अपने अस्तित्व की रक्षा भी नहीं कर पाते। ऐसे समय अपने सीमित होने का दर्द उन्हें सालता है। यही स्थिति वार्षिक अनुबंध पर खेती में काम करने वाले नौकरों की भी होती है जिन्हें सालगडी कहा जाता है। अभी भी स्थिति यह है कि इनका कोई संगठन नहीं है अथवा इनकी ओर से संघर्ष करने वाली संस्था नहीं है। विधवा, देहकर्मी और कॉलगर्ल्स की स्थिति तो और अधिक खराब है। समाज उन्हें हिकारत या तुच्छता की नज़र से देखता है और उनकी समस्याओं की ओर ध्यान ही देना नहीं चाहता।

भारत का दलित समाज सदियों से शापित जीवन जी रहा है। उनकी बस्तियां गांव

Scanned with OKEN Scanner

र बाहर होती थीं। वे अस्पृश्य माने जाते थे। स्वयं दलित भी ऊंची–नीची जातियों में बंटे हुए थे। उनके कोई अधिकार नहीं थे। हिंदू धर्म में अनेक प्रकार की विसंगतियां थीं। ये सब दलितों को हर प्रकार से प्रताड़ित करते थे। दलित विरोधी व्यवस्था के कारण दलित अपमानित किए जाते थे। अस्पृश्यता साधारण अपमान नहीं जो एक बड़ समुदाय को मनुष्य से चुपचाप सहना पड़ रहा था। "सदियों से स्वतंत्रतापूर्व तथा स्वातन्त्र्योत्तर भारत में उच्च वर्ग की सुख–सुविधा के लिए जीतोड़ मेहनत और उसके एवज में नाममात्र मजदूरी, गालियां और लात–घूसों की प्राप्ति दलित समाज के लोगों की नियति रही है। शासक वर्ग, जमींदार वर्ग के जोर पर जिसकी लाठी उसकी भैंस की कहावत को चरितार्थ करता रहा और महाजन वर्ग उनका आर्थिक तौर पर शोषण करता रहा। आज डॉ. अम्बेडकर के प्रभाव से दलितों की परिस्थिति में थोड़ा परिवर्तन आया है। लेकिन सामान्य दलित आज भी सीमांत आदमी ही है। भारतीय समाज में दलित अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहे हैं। वे अपने आपको स्थापित करना चाहते हैं। हाशिए को तोड़कर मुख्यधारा का हिस्सा बनना चाहते हैं। स्वतंत्रता के बाद देश संविधान लागू होने के बाद संविधान के कुछ प्रावधानों से अस्पृश्य समाज के अधिकारों का संरक्षण किया हैं। इसमें 17 अनुच्छेद में अस्पृश्यता को गैरकानूनी बतलाया है उतना ही नहीं उसको शैक्षणिक, राजनीतिक और नौकरी के क्षेत्र में आरक्षण देते हुए उनमें सुधार लाने का प्रयास किया है और 1993 में मानव अधिकार आयोग की स्थापना होने के बाद उनकी परिस्थिति में सुधार आया है।

भारत का आदिवासी समाज हाशिए का जीवन जीने के लिए अभिशप्त है। वह अपनी मान्यताओं, विश्वासों तथा परंपराओं को लेकर जीना चाहता है। आज भी उनमें अनेक अंधविश्वास पाए जाते हैं। जादू–टोना, जंतर–मंतर, वशीकरण, मोहनी आदि पर अधिकांश लोग विश्वास करते हैं। वन देवताओं की पूजा और वन अथवा जंगल का जीवन उन्हें अच्छा लगता है। अपनी विशेषताओं के कारण वह कौतुहल के केंद्र हैं। अपनी कुछ जनजातीय विशेषताओं के कारण वे मुख्यधारा के आकर्षण का केंद्र रहे है। इसका अर्थ यह नहीं कि सभी लोग इसी प्रवृत्ति के हैं। कुछ लोग हैं जो इस प्रकार की प्रवृत्ति से अलग सोचते हैं। जीवन पद्धति को बदलना चाहते हैं। आर्थिक, सामाजिक कारणों से वे विकास से दूर है। अपनी जनजातीय भिन्नताओं के कारण यह समाज आरंभ से ही मुख्यधारा के समाज के लिए आकर्षण और कौतुहल का विषय रहा है। सच्चाई यह है कि मुख्यधारा का समाज उनकी मान्यताओं को समझना नहीं चाहता। उनके भटकाव के कारणों को जानने का प्रयत्न भी नहीं करता उन्हें उपेक्षा से देखता है। मुख्यधारा के लोग उनके जंगलों में भटकने को एक सहज वृत्ति मानते हैं। आधुनिक वैज्ञानिक प्रगति के संदर्भ में आदिवासी समाज के जीवन–संघर्ष पर विचार करने पर पता चलता है कि विकास की प्रक्रिया ने राजनीतिक व्यवस्था के साथ मिलकर आदिवासी समाज को जितना छला है, उतना किसी और ने नहीं। विकास के नाम पर जमीनें ली गईं और उन्हें उचित मुआवजा भी नहीं मिला। उनको ठीक ढंग से बसाया भी नहीं गया। इन्हीं कारणों से वे भटकने के लिए विवश है। वे मुख्यधारा में आकर अपना जीवन ढंग से सुधारना चाहते हैं वो भी मुख्यधारा ऐसा नहीं होने देती क्योंकि इसमें मुख्यधारा का स्वार्थ है। इन्हीं सब कारणों से वे हाशिए के लोग बनकर रह गए है। इनके सब अधिकार छीन लिए गए हैं फिर भी भारत में मानव अधिकार आयोग की स्थापना के बाद उसकी परिस्थिति में सुधार लाया गया है। यह बात उल्लेखनीय है कि सरकार उनके लिए विभिन्न सरकारी माध्यम से उनकी परिस्थिति में सुधार लाने का प्रयास कर रही है।

Scanned with OKEN Scanner

पिछले कुछ वर्षों में विश्व की अर्थव्यवस्था में परिवर्तन आया है। गैट समझौते के बाद भारत भी उसका सदस्य बना है। निजीकरण, उदारीकरण, वैश्वीकरण का बोलबाला है। विभिन्न उद्योगपति अपने उद्योग अलग–अलग देशों में स्थापित कर रहे है। इंजीनियर कुशल कर्मचारी दूसरे देशों में जाकर काम कर रहे है। लगातार स्थान–परिवर्तन हो रहा है। भारत के अनेक लोग अमेरिका, जापान, ऑस्ट्रेलिया तथा अरब देशों में काम के लिए जा रहे हैं। वे अपनी जन्मभूमि से उखड रहे हैं। दूसरी जगह जड़ें जमाना कठिन हो रहा है। दो देशों की संस्कृतियों के बीच वे फंस गए हैं। यहां मुख्यधारा में ही दरारें पैदा हो रही है। उपयोगितावादी तथा उपभोक्तावादी संस्कृति उन्हें हाशिए पर धकेल रही है। स्थान परिवर्तन के कारण वे असहज बन रहे हैं। मूल संस्कृति छूटती नहीं और नई संस्कृति से तालमेल बैठता नहीं। ऐसी स्थिति में वे हाशिए का आदमी बनकर रह जाते हैं।

पिछले कुछ वर्षों से समाज वैज्ञानिक और संचार माध्यमों का ध्यान इस ओर गया है। उनकी समस्याओं को लेकर चर्चा हो रही है। अनेक छोटे–छोटे संगठन बन रहे हैं। विस्थापितों को बसाने के लिए रोज नए–नए आंदोलन खड़े हो रहे हैं और उनके मानव अधि ाकार का प्रश्न खड़ा हुआ है। पूरे विश्वभर मानव अधिकार के संरक्षण के लिए आंदोलन हो रहे हैं।

मनुष्य हाशिए पर अपनी इच्छा से नहीं जाता। कोई अपनी पहचान खोना नहीं चाहता हाशिए के लोग अपने जीवन काल में दुःख और यातना को सहते हैं। उनको इस प्रकार से विवश करने में मुख्य समाज की भूमिका होती है। आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक कारण उन्हें हाशिए पर ले जाते है। ये सभी कारण मुख्य समाज के अनुकूल होते है। भारतीय समाज की विकासधारा का अध्ययन करने से यह साफ होता है कि मुख्यधारा के अंदर और बाहर हाशिए पर जाने की स्थिति बनाई जाती है। भूमि अधिग्रहण होगा तो लोग रोज़गार की तलाश में भटकेंगे ही। वे अपने मूल में उखड़ जाएंगे। स्थान परिवर्तन होगा। जड़ों से अलग होने से सांस्कृतिक संकट खड़ा होगा। सभ्यता और संस्कृति की भिन्नता उन्हें अलग करती है। प्रजातियों की भिन्नता के कारण भी वे अकेले बनने लगते हैं। हाशिए के लोगों की यह विशेषता होती है कि वे एक समय में दो विश्वों में रहते हैं। एक ओर वे भारतीय होते हैं तो दूसरी ओर विदेशी। दोनों सभ्यताएं अलग–अलग मूल्य, दो विश्व, दो जीवन पद्धतियां और दो संस्कृतियों के बीच झूलते रहते हैं। उनकी इच्छा होती है कि उनकी पहचान बने, उनका अस्तित्व मान्य हो। आज पूरे विश्व में मानव अधिकार की समस्या का मुद्दा खड़ा हुआ है लेकिन पूरे विश्व में मानव अधिकार संगठन की स्थापना हुई है।

• • •

संदर्भ :

1. देवळाणकर शैलेंद्र : समकालीन जागतिक राजकारण, विद्या बुक पब्लिशर्स, औरंगाबाद, सितम्बर, 2011
2. पुरूषोत्तम सत्यप्रेमी : दलित साहित्य और सामाजिक न्याय, आगरा, 2005
3. कृष्णदेव मौर्य : भारत की चर्चित महिलाएं, अतुल प्रकाशन, कानपुर, 2016
4. स्मिता जोशी : मानवी हक्क व जबाबदा–या, गणराज्य पब्लिकेशन्स, पुणे, 2014
5. सतीश यादव व, इतर ,संपादितद्ध : हाशिए का समाज और हिंदी मराठी साहित्य, अरूणा प्रकाशन लातूर, 2017

Scanned with OKEN Scanner